भोपाल की पटिया परिकथा

मदनमोहन जोशी

भोपाल के इतिहास में एक पड़ाव और आता है जिसे पटिया युग कहा जा सकता है । यह सत्रहवीं शताब्दी में नवाबशाही की स्थापना के बाद प्रारंभ होता है और उसका पटाक्षेप होता है 12 अगस्त 1975 को जब अतिक्रमण-विरोधी अभियान के फलस्वरूप पटिये गायब हो जाते हैं या हाशिये में सिमट जाते हैं । इन ढाई सौ वर्षो में भोपाल की वैयक्तिक सामाजिक और व्यावसायिक जिंदगी प्रायः पटियों पर सिमटी हुई थी । शहर ने सामंती कलेवर को उतारने और नये परिधान ओढ़ने का सिलसिला वर्ष 1952 में शुरू किया जब नगर पालिका ने स्थानीय विरोध के बावजूद पत्थर की दीवालों और उसके दरवाजों को ढहाने का काम हाथ में लिया था ।

भोपाल के पटिये और जगहों के ओटलों से एकदम भिन्न रहे हैं । मुस्लिम शासनकाल में पर्दे की प्रथा इतनी सख्त थी कि चेहरा दिखना तो दूर अगर किसी औरत की आवाज बाहरी मर्द के कानों तक पहुँच जाए तो हाय-तौबा मच जाता है । इसलिए मर्दो ने अपने और औरतों के बीच दीवार का पर्दा खड़ा कर दिया । मियां बाहर पटियों पर और बीवी अंदर । इस जमाने में औरतें मियानों (पालकी) में आती-जाती थी । घरों के दरवाजे चैड़े रखे जाते थे जिससे वे सीधे अंदर पहुंच सकें । मियाना रखने के एकदम बाद कहार पीठ पीछे कर लेते थे ताकि सवारियों पर उनकी नजर न पड़े । लम्बे समय तक औरतों के तांगों में जाने की भी मुमानियत थी क्योंकि डर था कि कहीं उन्हें तांगे वाले की पीठ न लग जायें । इस तरह के नजारे अब अतीत में खो चुके हैं पर एक वक्त था जब मकान पर्दा प्रथा के मुताबिक बनते थे जिनमें बाहर बिछा हुआ पटिया ड्राइंग रूम का काम देता था । यहाँ मर्दों की महफिल जमती थी पान-छालिया तम्बाकू और हुक्के के दौर चलते थे तथा मनोरंजनार्थ मुर्गे लड़ाये जाते थे ।

सामंती व्यवस्थाओं के भी अपने अलग-अलग स्वरूप और अलग-अलग राग-रंग होते हैं । जिंदगी के मीठे मुगालतों में तरह-तरह के शगलों और शौकों में लोग जिंदगी की लय उसका लुत्फ खोजते हैं और इस सबसे बनती है उसकी एक विशिष्ट पहचान जीने का और बोलने का एक खास लहजा एक फलसफा भले ही वह मुफलिसी का ही क्यों न हो रियासती भोपाल ने इसकी बेजोड़ मिसाल पेश की है । इसके प्रतीक बने पटिये । दरअसल ये आर्थिक बेहाली के बीच वाणी विलासिता के दिलकश द्वीप रहे हैं । हालांकि इनकी तादाद अब बुरी तरह सिमट गई है ।

कुछ होटलें तक पटियों में परिवर्द्धित रूप हुआ करती थीं । इब्राहीमपुरा की अहद होटल ऐसी ही नायाब होटल थी । इस होटल में दरवाजा ही नहीं था । यह दिन रात याने

चैबीस घंटे खुली रहती थी । अहर्निश सेवा महे हमेशा यहाँ चाय की चुश्कियों पर गप्पों और लतीफों के अंतहीन दौर चलते थे । इसके मैनेजर खुद एक जाने-माने शायर थे जिनका नाम था मोहम्मद अली ताज । शहर में जो भी अदबी या सियासी खुराफात होती थी उसका ज्यादातर ताना-बाना यहीं बुना जाता था । मनचलों की एक टोली ने एक मर्तबा नगर पालिका चुनावों में एक वार्ड के हारे हुये उम्मीदवार का विजय जुलूस यह दलील देते हुये निकलवा दिया था कि अन्य उम्मीदवार से उसने ज्यादा वोट पाये हैं । इसलिये यह आधी जीत का हकदार है और इस नाते पचास प्रतिशत जश्न मना सकता है उस जमाने में देश के मशहूर शायरों का भोपाल आना-जाना लगा रहता था । शायरी की शमा जलती रहती थी । साथ-साथ अलमस्ती का आलम भी चलता था । जिगर मुरादाबादी बार-बार आने वाले शायरों में प्रमुख थे । वे महान शायर होने के साथ ही मस्त मौला भी थे । कुछ चुहलबाजों ने उनकी 'मेहमाननवाजी में काहिल क्लब ही बना डाला । इस क्लब का अपना संविधान था । इसका पहला नियम कायदा यह था कि खड़े हुये व्यक्ति को बैठा हुआ व्यक्ति और बैठे हुए व्यक्ति को लेटा हुआ शख्स आर्डर दे सकता है । इसका नतीजा यह हुआ कि ब्लब में हरेक सदस्य लेटा हुआ दाखिल होता था ताकि उसे हुक्म मानने की जेहमत नहीं उठानी पड़े । ऐसे माहौल में पटिया परिकथा में नये-नये पेज जुड़ते गये तथा पटिये सामाजिक और आर्थिक जिंदगी का अटूट हिस्सा हो गये ।

नवाबी दौर में भोपाल की शासन व्यवस्था चैधराहट पर आधारित थी । हरेक बिरादरी अपना मुखिया चुन उसे पगड़ी बांधती थी । सरकार ने इस चैधरियों को कई अधिकार दे रखे थे जिनमें लोगों के आपसी झगड़े निपटाना भी शामिल था । हर चैधरी का एक पटिया होता था जिस पर बैठक कर वह अपनी चैधराहट चलाता था । पटिये को सबसे ज्यादा प्रतिष्ठा इसी कानून ने दी । इस तरह हर बिरादरी का एक अड्डा हो गया भोपाली भाषा में अड्डे को अट्टा कहा जाता है । जैसे अट्टा सूजे खां । भोपाल की सियासत की एक बड़ी हस्ती - शाकिर अली खां इसी अट्टा सेजे खां के पटिये की पैदाइश थे । उन्होंने अपनी सार्वजनिक जिंदगी पटिये से ही शुरू की और यहीं से कई लड़ाईयों का संचालन किया । इसमें सन् 1933 की वह प्रसिद्ध मुहिम भी शामिल है जो उन्होंने नवाब द्वारा पंजाबी मुसलमानों को भोपाल लाने उन्हें उंचे ओहदे देने तथा विशिष्ट सुविधाएं देकर बसाने की कार्यवाही के खिलाफ छेड़ी थी । शाकिर अली खां को जो बात सबसे ज्यादा नागवार लगी वह था सुल्तानपुर (चंदपुरा) में नवाब के पंजाबी चहेतों की खेती के लिए खास तौर पर बनाया गया पहलकदमी तालाब और नहरें । यह स्थान बारना बांध के पीछे पड़ता है । नवाब ने जिन लोगों का निर्यात किया उनमें से कुछ बाद में पाकिस्तान में सर्वोच्च पदों पर पहुंचे । जैसे ख्वाजा निजामुद्दीन तथा

गुलाम मोहम्मद गवर्नर जनरल और मोहम्मद अली बोगरा प्रधान मंत्री हुए, सोयेब कुरेशी पाकिस्तान के लन्दन में हाई कमिश्नर बनाये गये । इसी सूची में सर सैयद अहमद के साहबजादे सर सार मसूब का नाम भी आता है ।

भोपाल में सियासत और साहित्य का सफर लगभग एक साथ तय हुआ । यहां की शायरी भी मुख्यतः पटियों की पैदाइश मानी जाती है । खिलाड़ी जुआड़ी दादा और पहलवान भी अपने पटिया प्रेम में किसी से पीछे नहीं थे । कहीं-कहीं तो दादाओं का इतना दबदबा था कि उनके पटियों के आगे से कोई सौभाग्यशाली ही इज्जत बचाकर निकल सकता था । कहा जाता है कि एक 'दादा सम्राट को जब पुलिस पकड़ने में कामयाब नहीं हो सकी तो नवाब साहब के कहने पर उसे दुर्घटना के जरिये मारने की योजना रची गयी । जो भी हो पटियों की जिंदगी का एक पक्ष यह भी है । मामूली-सी बात पर पटियों पर छुरे चल जाना आम बात थी । मगर मिनटों में वहां जिंदगी भर की दुश्मनी दोस्ती में बदल जाती थी ।

यों तो हर मोहल्ले और गली में पटिये सामूहिक मिलन के मंच थे पर शहर के जाने-माने लोगों का जमावड़ा नगर के मुख्य भाग में ही होता था । इस किस्म के पटियों की तादाद लगभग डेढ़ दर्जन थी । प्रत्येक की अपनी विशिष्ट राजनीतिक और सामाजिक हैसियत थी । व्यवसाय के क्षेत्र में पटियों का प्रचलन सन् 1828 के आस-पास ही बढ़ा होगा जब बेगम कुदेसिया ने जामा मस्जिद का निर्माण कर उसके आस-पास दुकानें बनवायीं । बेगम कुदेसिया ने जुमेराती से इब्राहीमपुरा तक की सड़क भी बनायी थी । गरज यह कि पटियों की कहानी मूलतः भोपाल के इतिहास की कहानी है । पुराने भोपाल में जो कुछ भी सुन्दर और अच्छा है वह बेगमों का विशेष रूप से शाहजहां बेगम का बनाया हुआ है । शाहजहां बेगम ने औरतों के मनोरंजन के लिये काफी काम किया था जिसके साक्षी मीना बाजार और परी बाजार रहे हैं । इसके अतिरिक्त अजायबघर में, जहां अब मौलाना आजाद सेन्ट्रल लाइब्रेरी है, हफ्ते में एक बार औरतों और बच्चों के लिए बैंड-वादन का विशेष प्रोग्राम होता था । मुगल बादशाह अपने निर्माण-प्रेम के लिये प्रसिद्ध है । विलीनीकरण के वक्त सरकार को नवाब से लगभग एक हजार इमारतें विरासत में मिली थी । इनमें से बहुत कम समय के थपेड़े झेल पाई है । समय अपने हाथों के दस्ताने बदलता रहता है मगर दास्ताने नहीं दफना पाता है । यही वजह है कि पटिया परिकथा की कशिश अभी भी बाकी है ।